वैदिक ज्ञान भण्डार में "यज्ञ"

ज्ञान के दो भाग हैं – लौकिक और पारलौकिक। इस ज्ञान में पारलौकिक ज्ञान विशेष रूप से और लौकिक ज्ञान को साधारण माना गया है। पारलौकिक ज्ञान परमात्मा की प्राप्ति तक पहुंचता है और लौकिक ज्ञान संसार के समस्त कार्यों को करते हुए पारलौकिक सिद्धि में मदद पहुंचाता है। मनुष्य की कल्पना से निभ्रन्ति पारलौकिक ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता और लौकिक ज्ञान में कल्पना शक्ति से उन्नति होती है। वेदों में जितना भी ज्ञान है वह यज्ञ से झलकता है। वेदों में जो कुछ कहा गया है वह यज्ञ के लिए ही है। वैदिक ज्ञान यज्ञों में ही ओतप्रोत है।

यह शब्द "यज्" धातु से बनता है। यज् धातु का अर्थ देवपूजा, संगतिकरण और दान है। अपने से जो बड़े हैं, वे देव समान हैं। उनकी पूजा करना यज्ञ है। बराबर वालों के साथ संगीत करना और छोटों को कुछ देना भी यज्ञ ही है। छोटा और बड़ा केवल मनुष्यों में ही नहीं है बल्कि संसार के हर क्षेत्र में और हर पदार्थ में है। किसी भी शक्ति हो, कैसा भी गुण हो, यदि वह बड़ा है तो पूजनीय है, बराबर का है तो मिलने योग्य है और और यदि छोटा है तो वह पाने का अधिकारी है। जिस प्रकार उपरोक्त तीनों लोक हम से पूजा, संगति और दान पाने के अधिकारी हैं उसी प्रकार हम भी दूसरों के द्वारा योग्यतानुसार पूजा, मैल और दान पाने के अधिकारी हैं। इस प्रकार के समस्त जड़ और चेतन को परस्पर एक दूसरे से लाभ पहुंचाना ही यज्ञ है।

इस प्रकार के किए गए महान यज्ञ को शतपथ ब्राम्हण (१/७/४५) में "यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म" अर्थात यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म माना गया है। इसका अर्थ यही है कि जितने श्रेष्ठतम् कर्म हैं, सब यज्ञ ही है। यज्ञों को तीनों भागों में बाटा जा सकता है – कर्म यज्ञ, ज्ञान यज्ञ और उपासना यज्ञ।

षोडश संस्कार (विवाह, सन्तान) शिक्षा, आहार, वस्त्र, गृह, समाज, कृषि, पशु पालन, संगीत, गणित, भूगोल, ज्योतिष, वैद्यक, रसायन, भवन निर्माण, यंत्र, शस्त्र, वाहन, और युद्ध विद्या आदि विद्याए कर्मविद्या से सम्बन्धित हैं। ईश्वर, जीव, पुनर्जन्म, कर्मफल, सृष्टि, प्रलय, वर्ण, आश्रम, और स्वाध्याय आदि ज्ञान यज्ञ से समन्धित है। सदाचार, दया, प्रेम, दर्शन, भक्ति, वैराग्य, योग और समाधि आदि क्रियाएं उपासना यज्ञ से सम्बन्धित हैं।

वेद में ज्ञान का अथाह भण्डार सागर है। यज्ञ का क्षेत्र अति विशाल है। मैं यहां पर सिर्फ कर्म योग का भी बीज रूप में जो अथर्ववेद में मिलता है उसकी एक झलक मात्र प्रस्तुत कर रहा हूं।

कर्म यज्ञ को आर्यों ने बहुत ही उन्नत शिखर तक पहुंचाया है। इसके स्थूल और सूक्ष्म विज्ञानों को देखकर हमारी यह धारणा बहुत ही पुष्ट होती है कि वैदिक ज्ञान से मनुष्य काल्पनिक ज्ञान की बहुत बड़ी उन्नति कर सकता है। ऋषि मुनियों ने वैदिक ज्ञान के द्वारा यज्ञ से सम्बन्ध रखनें वाले उच्चे से उच्च नैतिक विज्ञान में अपनी गति कर ली थी। यद्यपि ब्राम्हण और सूत्रग्रंथो में इन यज्ञों के अनेकों प्रकार बहुत विस्तार से वर्णित हैं परन्तु बीज रूप से अथर्ववेद ११-७ में कुछ

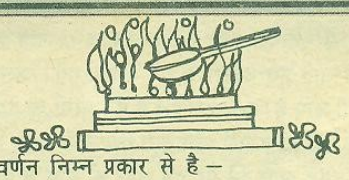

यज्ञों का वर्णन निम्न प्रकार से है –

राजसूयं वाजपेयमग्निष्टोमस्तदध्वरः।
अकक्ष्वमेधावुच्छिष्टे जीवनर्हिमर्मदिन्तमः ॥७॥
अग्न्याधोयमथो दीक्षा कामप्रश्छन्दसा सह ॥८॥
अग्निहोत्रं च श्रद्धा च वषट्कारो व्रतं तपः ॥९॥
चतुर्होतार आप्रियक्ष्यातुमस्यिनि नीविदः ॥१९॥

(अथर्व-११/७)

इन मंत्रों के राजसूय, वाजपेय, अग्निष्टेम, अक्ष्वमेघा, अग्निहोत्र, अग्न्याधान और चातुर्मास्य का वर्णन आता है। इस वेद में गोपथ ब्राम्हण ने यज्ञों का जो क्रम बतलाया है उसके अनुसार-अग्न्याधान, पूर्णाहुति, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, आग्रहायन (नवस्येष्टि), चातुर्मास्य, पशुबन्ध, अग्निष्टोम, राजसूय, वाजपेय, अक्ष्वमेघ, पुरुषमेघ, सर्वमेघ, दक्षिणावाले, बहुत दक्षिणावाले और असंख्य दक्षिणावाले यज्ञों का वर्णन है। वहां लिखा है कि जो व्यक्ति इन यज्ञक्रमों को जानता है वह यज्ञों के साथ एक आत्मा होकर दिव्य गुणों को प्राप्त करता है।

इन यज्ञों का विवरण निम्न प्रकार से है –

अग्न्याधान-

अग्नीन् आधाय पूर्णाहुत्या यजेत्

(गोप. ५/५/८)

अर्थात पूर्ण आहुति पर्यन्त अग्न्याधान करें। यह अग्न्याधान है।

अग्निहोत्र

अग्नेय एव सायं सूर्याय प्रातः एव ह वै अग्निहोत्रं जुहोति।

(शतपथ २/२/४/१७)

अर्थात अग्नि के लिए सन्ध्या समय और सूर्य के लिए प्रातः काल जो हवन करता है, वह अग्निहोत्र है।

दर्शपूर्णामास

सुवर्गाय हि वै लोकाय दर्शपूर्णामासौ इज्येते।

अर्थात अमास्या और पूर्णिमा के, (तैत्ति. सं. २/२/५)

दिन के हवन को दर्शपूर्णमास कहा जाता है।

चातुर्मास्य

फाल्गुन्यां पौर्णमास्या चातुर्मास्यानि प्रयुज्जीत मुखं वा एतत् संवत्सरस्य यत् फाल्गुनी पौर्णमासी।

(गोप.२/१/११)

अर्थात फाल्गुणी पौर्णमासी और कार्तिकी पौर्णमासी को जो यज्ञ किए जाते हैं, वे चातुर्मास्य कहलाते हैं।

आग्रहायण वा नवसस्येष्टि

उत्तरायण दक्षिणायन के आरम्भ में जो यज्ञ होते हैं, वे आग्रहायण वा नवसस्येष्टि कहलाते हैं।

अग्निस्टोम –

एष वै ज्येष्ठो यज्ञानां यदग्निष्टोमः, (तस्मात् उ ह वसन्ते वसन्ते) ज्योतिष्टोमेन एव अग्निष्टोमेन येजत्।

(ताण्डय ब्रा.६/३/८, शत. १०/१।२/९)

अर्थात जो प्रति वर्ष बसन्त में वार्षिक यज्ञ होता है, उसे अग्निष्टोम कहा जाता है। उसके अग्निष्टोम, उक्थ, बाजपेय, अतिराग आदि अनेक प्रकार हैं। वह उपर्युक्त सब यज्ञों में श्रेष्ठ माना जाता है।

पितृयज्ञ-

अथ् यत् प्रजां इच्छते यत् पितृम्यो निपृणाति।

(श. ६/७/३/७)

अर्थात जिसे पुत्र की कामना हो और जो पितरों को तृप्त करता है। पुत्रार्थी को पितृयज्ञ आवश्यक है। वही पुत्रकामेष्टि है।

पञ्चमहायज्ञ –

मञ्च वै एते महायज्ञाः सततिप्रयान्ते।

(तैत्ति.आ.२/१०)

अर्थात ये पञ्चमहायज्ञ हैं जो सदा आरम्भ किए जाते हैं।

राजसूय ओर अश्वमेघ यज्ञ –

राज्ञः एवं सूर्य कर्म। राजा वै राजसूयेन इष्ट्वा भवति।

अर्थात राजसूय से ही राजा – (शतपथ १३/२/२/१)

– होता है। यह राजगद्दी के समय यज्ञ किया जाता है।

राजा वै एष यज्ञानां यद् अश्वमेघः।

(श.१३/२/२/१)

सर्वाःवै देवताः अश्वमेघे अन्वायत्ताः तस्माद् अश्वमेघयाजी सर्वदिशो अभिजयन्ति।

(शतः१३/१/२/९/३)

अर्थात सब देवता अश्वमेघ में आते हैं। अश्वेमेघ करने वाला सभी दिशाओं को जितने वाला होता है।

श्रीवैराष्ट्रं राष्ट्रं वै अश्वमेघः। तस्माद्राष्ट्री अश्वमेघेन ययेत्।

अर्थात ऐश्वर्य ही राज्य है। राष्ट्र ही अश्वमेघ है, इसलिए सम्राट अश्वमेघ करें।

गोमेघ यज्ञद –

पृथ्वी को उर्वरा बनाना, नई भूमि तैयार करना और नये स्थान तलाश करना इस यज्ञ का प्रधान कार्य है। इसी को गोमेघ यज्ञ कहा जाता है।

वैदिक आर्यों का यह सनातन विश्वास रहा कि यज्ञों से आरोग्यता, सन्तति, वर्षा का नियन्त्रण, राज्य, विद्या, सेवा और परमात्मा की प्राप्ति होती है। इस सिद्धियों के प्राप्त हो जाने पर मनुष्य को फिर कोई इच्छा नहीं रहती। उसकी तृष्णा नियन्त्रित हो जाती है। इस मार्ग को अपनाकर वह लोक और परलोक दोनों का आनन्द अनुभव करता है।

यह आकाशीय संसार और मनुष्य शरीरस्थ दोनों से सम्बन्ध रखता है। आकाशीय संसार का एक एक पदार्थ शारिरीक संसार का आधार है। आकाशीय संसार में जिस प्रकार समस्त पदार्थ विराजमान हैं उसी प्रकार वहां यज्ञ भी हुआ करता है और जिस प्रकार आकाश में यज्ञ हुआ करता है, उसी तरह शरीर में भी यज्ञ होता है। ये पिण्ड और ब्रम्हाण्ड के यज्ञ निरन्तर होते रहते हैं। किन्तु परिवर्तनों के कारण कभी कभी दोनों में वैषम्य उत्पन्न हो जाता है। इसलिए भौतिक यज्ञों से दोनों का सामन्जस्य करना ही वैदिक यज्ञों का मुख्य उद्येश्य है।

समाचार पत्रों से

वेदांवरील आक्रमण थांबवा!

तरुण भारत दि. ९।१०।८७

आपले राज्य स्थिरपद होण्यासाठी ब्रिटिशांनी भेद नीतीचे विष या देशात रुजवले. ब्रिटिश गेले पण त्यांनी रुजवलेला हा विशवृक्ष अजूनही फोफावत चाललेला आहे. वर्गविग्रहाची समस्या त्यापैकीच. तिचेही स्वरूप आज उग्र आणि विकृत बनत चाललेले आहे. दलितांवरील अन्यायाचे परिमार्जन म्हणजे दलितेतरांचा छळ, असे समीकरण होऊ पहात आहे. दलितांच्या कैवाराच्या भूमिकेतून केले जाणारे लेखन जेव्हा वेदांसारख्या प्राचीन व श्रेष्ठतम वाङ्मयावरही आघात करते तेव्हा तो विषय सचिंत करतो, चिंतनीय ठरतो.

वेदांचे खरे स्वरूप या नावाची एक पुस्तिका नुकतीच प्रसिद्ध झालेली आहे. ९५ पृष्ठांची ही पुस्तिका श्री. गौतम शिंदे यांनी अनुवादिली असून मूळ लेखक श्री. सुरेंद्र अज्ञात या नावाचे पंजाबी ग्रहस्थ आहेत. वेद व ब्राम्हण ग्रंथातील आधारांचे उल्लेख करून त्यातील कर्मकाण्डाची टीका टिप्पणी या ग्रंथात करण्यात आलेली आहे.

या पुस्तिकेचा एकूण आविर्भाव पाहिला कि बव्हंशी आशय द्वेषमूलक असावा असे वाटते. या ग्रंथात घेतले गेलेले आक्षेप कितपत यथार्थ आहेत याबद्दल विचक्षणांनी जरूर लिहावे. ज्या वेदांचे रक्षण भगवंतांनी अवतार घेऊन केले, थोरथोर ऋषिमुनींनी रक्ताचे पाणी करून ते सांभाळले, त्या वेदांवरील आक्षेप दिशाभूल करणारे असतील तर ती विकृती दूर झालीच पाहिजे. हजारो वर्षांची परंपरा लाभलेल्या आणि हजारो माणसांच्या मनामध्ये ज्यांच्याबद्दल आदरभाव आहे अशा वेदग्रंथांच्या आक्षेपाकरता वापरली गेलेली भाषा किमान सौम्य तरी असावी. पण छे, या ग्रंथात वापरलेली भाषा अत्यंत अश्लील आहे. लेखस्वातंत्र्याच्या सीमा कितीही रुंदावल्या तरी त्याने हजारोंच्या श्रद्धास्थानाला मातीमोल करू नये. सिमेंट काँक्रीटचे नवे बंगले कितीही उत्तम ठरले तरी वेरूळ-अजिंठ्याची लेणी पाडून ते बांधायचे नसतात. हा विवेक सांभाळलाच पाहिजे. हा ग्रंथ निर्माण करणाऱ्यांनी तो विवेक पाळलेला नाही. म्हणूनच वेदवाङ्मयाच्या ब्राह्मणग्रंथांच्या जाणत्यांनी हा ग्रंथ पाहून त्यात घेतलेल्या आक्षेपांना उत्तर द्यावे आणि निराधार आक्षेपांचे खंडन करावे, असे वाटते. निदान त्यामुळे तरी वेदांवर अन्याय होणार नाही.

डॉ. ग.प्र. परांजपे,
पुणे

वेद संसार के प्राचीनतम ग्रंथ हैं। इन वेदों में यज्ञों का वर्णन है। अतः यज्ञ वेदकालीन हैं। इस प्रकार हम देखते हैं यज्ञ व्यवस्था संसार की प्राचीनतम व्यवस्थाओं में से एक व्यवस्था है। इसके द्वारा हम इस लोक और परलोक दोनों का आनन्द लेते हैं, उत्तरदायित्व निभाते हैं, अधिकारों की मांग करते हैं।

घनश्याम लाम माथुर
पुरालेख अधिकारी, के.आर. ५०२, माला रोड,
रघुनाथ होस्टेल के पीछे, कोटा (राज्यस्थान) - ३४४ ००१.